मेहनगर, आजमगढ़ का इतिहास, 712 ई0 पूर्व.

712 ई0 पूर्व हिन्दू धर्म का शासन था, उसी समय ग्रामसभा खुटवा चक, खुटवा, मेहनगर में चन्द्रसेन सिंह गौतम का किला था जो आज भी नहर से पूरब डिहवा नाम से जाना जाता है। राजा चन्द्रसेन सिंह गौतम के दो पुत्र थे, उनके मृत्यु के पश्चात परम्परागत बड़े पुत्र अभिमन्यु सिंह गौतम को राज्य मिला। अभिमन्यु सिंह गौतम का शासनकाल अच्छा था। 712 ई0 में अरबों का अक्रमण हुआ, सारा धन लूटकर अपनी राजधानी गजनी ले गये। आपसी फूट के कारण हिन्दू शासन आक्रमण में परास्त होते गये और इस्लाम राज स्थापित होता गया। सुल्तान होने के बाद खलीफा द्वारा इस्लाम धर्म का प्रचार भी आगे बढ़ता गया। 1526 ई0 से 1857 ई0 तक मुगलों का आगमन हो गया। 1658 ई0 में औरंगजेब मुगल सम्राठ बन गया। धीरे–धीरे पूरे देश के राजाओं को पराजित करता रहा और धर्म भी फैलाता रहा। 1590 ई0 में अब्दुल रहीम खानखाना को जौनपुर के सुबेदार के रूप में रखा गया। 1609 ई0 में अभिमन्यु सिंह गौतम पर मुगल सम्राठ औरंगजेब का दबाव हुआ कि धर्म परिवर्तन नहीं करते हो, तो आप पर आक्रमण करके मार दिया जाएगा और अब्दुल रहीम खानखाना को भेज दिया गया, जिससे अभिमन्यु सिंह गौतम घबड़ा कर इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया और अपना नाम बदलकर दौलत खाँ रख लिया। निःसंतान होने के कारण अंतिम दिनों अपने भतीजे हरिवंश सिंह गौतम को गोद ले लिया और अपना उत्तराधिकारी बना दिया। राजा हरिवंश सिंह गौतम ने मेहनगर में 1629 ई0 में आलिशान कोट बनवाया। तप्पा हरिवंशपुर उन्हीं के नाम का प्रतीक है। मेहनगर की कोट हरिबंश बांध वहां का प्रसिद्ध तालाब है। अभिमन्युपुर, दौलतपुर और दयालपुर आदि ग्राम भी उन्हीं के बसाये कहे जाते हैं। आजमगढ़ शहर के निकट टौंस नदी के तट पर उन्होंने अपनी एक कोट भी बनवायी थी, जहां आजकल जिलाधिकारी की वर्तमान कोठी स्थित है। हरिबंश सिंह का रहन–सहन और खान–पान अपने दत्तक पिता दौलत खाँ सा हो गया, इसी कारण उनकी रानी ज्योतिमणि सिंह खिन्न होकर कुंवर परिवार से अलग रहने लगी, जहां उनके संपर्क में रानी की सरांय आबाद हुआ, जो सरांय रानी के नाम से बजार जौनपुर–आजमगढ़ रोड पर स्थित है। मरणोपरान्त उनकी कब्र मेहनगर रौजा में है जो मकबरा के रूप में जाना जाता है। हरिबंश सिंह के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र गंभीर सिंह उत्तराधिकारी हुए। कुछ दिन उपरान्त किन्हीं वैमनस्यताओं के कारण उनकी हत्या कर

दी गयी और इसके बाद छोटे भाई धरनीधर सिंह मेहनगर की जागीर के अधिकारी बने। पारंपरिक वैमनस्य के कारण उनके तीनों पुत्र विक्रमाजीत सिंह, रूद्र सिंह और नरायण सिंह अलग–अलग रहने लगे। परंपरा के अनुसार पैत्रिक जागीदारी के अधिकारी विक्रमाजीत सिंह माने गये। रूद्र सिंह तथा नरायण सिंह को गुजारेदारी मिली। रूद्रसिंह के मात्र एक पुत्री थी और कोई वंश ना था, जिसका विवाह उन्नवल राज्य में हुआ था। अतः उन्होंने राजा विक्रमाजीत सिंह की इच्छा के विरूद्ध अपनी संपत्ति अपने नाती को दे दी, ऐसा कहा जाता है। इसी कारण विक्रमाजीत सिंह ने उनकी हत्या करवा दी। रूद्रसिंह की हत्या के पश्चात उनकी पत्नी भवानी कुंवर सिंह ने अपने मायके जाकर राजा विक्रमाजीत के विरूद्ध शाही दरबार में जाकर फरियाद दी। फलतः राजा विक्रमाजीत सिंह को गिरफ्तार करके दिल्ली भेजे व इस्लाम धर्म कुबूल कर लेने पर उन्हें रिहाई मिली और उन्होंने एक मुसलमान स्त्री से विवाह भी कर लिया, जिससे उनके दो पुत्र आजम खाँ और अजमत खाँ हुए। राजा विक्रमाजीत सिंह को दिल्ली से रिहा होकर मेहनगर आने पर अपने छोटे भाई रूद्र सिंह की पत्नी भवानी कुंवर सिंह की गुजरदारी जब्त कर ली और साथ ही सम्राट को माल गुजारी देना भी बंद कर दिया। इन्हीं शिकायतों से क्रोधित होकर सम्राट ने उनके दमन के लिए एक सेना भेजी जिससे सिंह पुर के युद्ध में विक्रमाजीत सिंह मारे गये और उनके बाद मेहनगर की जागीरदारी का भार रूद्रसिंह की पत्नी भवानी कुंवर सिंह ने संभाला और उन्होंने विक्रमाजीत सिंह के दोनों नाबालिग पुत्रों आजम खाँ और अजमत खाँ का लालन–पालन भी किया, जो बाद में राज उत्तराधिकारी हुए। वर्तमान आजमगढ़ नगर के चारो ओर राजपूतों विशेषतयः अटैसी के बिसेन राजपूतों की प्रधानता थी। वो किसी का प्रभुत्व सरलता से स्वीकार नहीं करते थे। अतः उन्होंने आसपास के अधिकांश भूभाग पर अपना अधिकार जमा लिया था। बालिक होने पर राजा आजम खाँ 1865 ई0 में अपनी जागिरदारी का केन्द्र मेहनगर से हटाकर टौंस नदी के तट पर लाये और वहां पर उन्होंने एक छोटा सा किला बनवाया और उसका नाम आजमगढ़ रखा। धीरे–धीरे उसके चारो ओर आबादी बढ़ने लगी और कुछ दिनों उपरान्त उसने नगर का रूप धारण कर लिया। ज्यों–ज्यों आबादी बढ़ती गयी, एक–एक मोहल्ले आबाद होते गये, जो राज्य के प्रमुख अधिकारियों के नाम पर प्रसिद्ध होते गये, जैसे– पहाड़ खाँ के नाम पर मुहल्ला पहाड़पुर, पाण्डेयपुर, अंतपुरा, सीताराम इत्यादि। कुछ छोटे टोले भी निम्न जातियों के नाम पर अलग–अलग बसे

जिसके प्रतीक कुर्मी टोला, खत्री टोला, कुंदीनगर टोला तथा खरास टोला आदि हैं, इसी प्रकार गुरू घाट तथा गौरी शंकर घाट भी दो प्रमुख जनों के नाम से ही प्रसिद्ध हैं। राजा आजम खाँ कुशल शासक के साथ योग्य सैनिक भी थे। दिल्ली के सम्राठ औरंगजेब ने उन्हें मराठों से लड़ने के लिए दक्षिण भेजा था। जब वे मराठों पर विजय प्राप्त करके लौटे तो कुछ लोगों ने आजम खाँ के विरूद्ध सम्राठ के कान भर दिये, परिणामस्वरूप वे बंदी बनाकर रास्ते में ही कन्नौज में रोक दिये गये, बंदी दशा में ही उनका वहीं पर मृत्यु हो गयी। उनका शव आजमगढ़ लाकर नगर के पश्चिम भाग लखरांव में टौंस नदी के पश्चिम किनारे पर दफना दिया गया और उस पर मकबरा बनाया गया जो इस समय भी वहां पर मौजूद है। राजा आजम खाँ के बाद सन् 1677 ई0 में आजमगढ़ के जागिरदारी का समस्त उत्तरदायित्व उनके छोटे भाई अजमत खाँ के हाथ में आया, जो तब तक अजमतगढ़ तहसील–सगड़ी में अपने ही नाम पर बनवाये ग्राम पर रहते थे। अपने भाई के आजीवन बंदी दशा में क्षुब्द होकर उन्होंने सम्राट को खिराज देना बन्द कर दिया, वर्षों तक खिराज न मिलने पर 1688 ई0 में दिल्ली सम्राट ने अपने सेनापति छबीले राम को अजमत खाँ को परास्त करने के लिये भेजा। कूटनीति कुशल अजमत खाँ ने सेना के आते ही छबीले राम का पूर्ण स्वागत सत्कार किया और कौशल से उन्हें हरिबंशपुर के किले में बंदी बनाकर रख दिया। यह खबर जब दिल्ली पहुँची तो औरंगजेब के फौजी फरमान पर इलाहाबाद के सूबेदार हिम्मत खाँ ने एक सेना के साथ आजमगढ़ पर चढ़ाई की, युद्ध में विजय होती न देख, अजमत खाँ अपने चारों पुत्रों (एकराम खाँ, मुहब्बत खाँ, नौबत खाँ और सरदार खाँ) तथा प्रमुख सहायक अधिकारियों सहित उत्तर की ओर भागे हिम्मत खाँ की सेना ने सरयू तट तक उसका पीछा किया। वहां पर गहरी मुठभेड़ हुई और अजमत खाँ और उसके प्रमुख सहायक बलदेव मिश्रा ने अपने घोड़ों को भरी हुई सरयू नदी में कुदा दिया। अजमत खाँ तो सरयू में विलीन हो गये किन्तु बलदेव मिश्र सफलता पूर्वक दूर निकल गये। अजमत खाँ के दो पुत्र एकराम खाँ व मुहब्बत खाँ भी किसी प्रकार वहां से निकल भागे किन्तु दो पुत्रों को नौबत खाँ और सरदार खाँ को शाही सेना ने बंदी बना लिया। बाद में एकराम खाँ ने किसी प्रकार से आजमगढ़ की जागीरदारी संभाला किन्तु कुछ ही दिन पश्चात् उनकी भी मृत्यु भी हो गई। एकरामपुर गांव, एकराम बाँध, महावत गढ़, सरदारपुर इत्यादि इन्हीं की स्मृति स्वरूप बसाये गये हैं। एकराम खाँ के बाद उसके छोटे भाई

मुहब्बत खाँ के पुत्र इरादत्त खाँ आजमगढ़ को जागीर के उत्तराधिकारी बनाये गये, जो अपने पिता की सहायता और सलाह से सारा कार्यभार संभाले रहे। इस समय आजमगढ़ तालुका की शक्ति अपने चारो ओर एक ही मिट्टी का बाँध बंधवाया जो आज भी ध्वस्थ अवस्था में स्थान–स्थान पर पाया जाता है। उन्होंने ही आजमगढ़ जिले भर के 21 परगनों की कुल जागीरदारी को दो प्रमुख भागों (वर्तमान घोसी तहसील के परगना नत्थूपुर और वर्तमान फूलपुर तहसील के परगना अतरौलिया) में बांट दिया और इस प्रकार पूर्वी जिले का नाम मधुबन तथा पश्चिमी का गोहनापुर रखा। प्रबन्ध तथा मालगुजारी वसूली को सुगमता की दृष्टि से इन्हीं दो प्रमुख भागों के अन्तर्गत और भी छोटे–छोटे थाने स्थापित कर इलाके की रक्षा के लिये उन स्थानों पर कुछ सैनिक भी नियुक्त कर दिये, इस प्रकार उन्होंने पुनः अपनी स्वतंत्र सत्ता ही नहीं कर ली वरन् बादशाह को किसी प्रकार का खिजाब भी देने से साफ इन्कार कर दिया। मुगल सम्राट के सम्मुख आजमगढ़ की ऐसी हरकतों की रिपोर्ट बराबर पहुँचती रही, जिसका परिणाम हुआ, 1703 ई0 में एक शस्त्र सज्जित शाही सेना का आजमगढ़ पर पुनः आक्रमण, इस आक्रमण का बढ़ा कदम रोकने के लिये आजमगढ़ की सेना कौड़िया तक पहुंच गई, उसी को समीकट दोनों में घोर संग्राम भी हुआ जिसमें शाही सेना का सेनापति मारा गया और सेना भाग खड़ी हुई।

कुछ दिनों बाद 1707 ई0 में आजमगढ़ की जागीरदारी पर पूर्वी दिशा से भोजपुरी राजपूत कुंवर धीरा सिंह का एक जबरदस्त हमला हुआ जिससे जिले का पूर्वी भाग इरादत्त खाँ के अधिकार से चला गया। बाद में अजमत खाँ का शव ढूंढकर सरयू नदी से निकाला गया और आजमगढ़ लाकर दफना दिया गया, जिसकी कब्र का छोटा सा मकबरा आज भी आजमगढ़ नगर के पश्चिमी ग्राम करतार पुर में फैजाबाद रोड पर मौजूद है। कुछ दिनों पश्चात् किसी उपाय से मुहब्बत खाँ ने लाटघाट के पास उक्त आक्रमणकारी राजपूतों से लड़कर उन पर विजय प्राप्त की और उनका भोजपुरी नेता कुँवर धीरा सिंह पड़रौना के किले में जा छिपा, जहां वह मार डाला गया। इस प्रकार आजमगढ़ की पूरी जागीरदारी पुनः मुहब्बत खाँ के पास वापस आ गई। कुंवर धीरा सिंह का बनवाया हुआ पक्का मकान और बारादरी अब भी लाटघाट में ध्वस्थ अवस्था में है। मुगल सम्राट फारूख सियर के समय में जब दिल्ली के तख्त में अनेक कमजोरियां आ गयी तो उसने अपने शासक के पूर्वी सूबे जौनपुर और चुनार इत्यादि सन् 1730 ई0 में

अपने प्रमुख सहायक नवाब मुर्तजा खाँ को अर्पित कर दिया। पश्चात् सन् 1742 ई0 में अवध के नवाब सहादत अली खाँ ने आगरे की मुगल सल्तनत से अलग होकर अपनी अलग सत्ता कायम की, आजमगढ़ का क्षेत्र जब जौनपुर के नवाब मुर्तजा खाँ के अधिकार में आ गया तो उन्होंने खिराज वसूली की चेष्टा की, किन्तु कहा जाता है कि मुहब्बत खाँ ने किसी प्रकार का खिराज देना स्वीकार नहीं किया। तब मुर्तजा खाँ ने आजमगढ़ का इलाका नवाब अवध को सुपुर्द कर दिया, इस परिवर्तन के बाद भी जब वसूली में सफलता नहीं मिली तो नवाब अवध ने जौनपुर के नवाब की सहायता से आजमगढ़ पर चढ़ाई की, जिसमें मुहब्बत खाँ ने मुकाबला ना करके अपनी हार स्वीकार कर ली, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें बंदी बनाकर गोरखपुर भेज दिया गया, जहां 1730 ई0 में उनकी मृत्यु हो गयी। मुहब्बत खाँ के बंदी हो जाने के बाद इनके बेटे इरादत्त खाँ ने फर्रूखाबाद के नवाब से अपना सम्बन्ध स्थापित किया और फर्रूखाबाद तथा जौनपुर की लड़ाईयों में नवाबी की पूरी सहायता की, जिसके कारण नवाब अवध को नीचा दिखना पड़ा। अस्तु विजय के पश्चात् फर्रूखाबाद के नवाब ने जौनपुर, अकबरपुर आदि को अपने साले साहब जामा को दे दिया। उस समय तक जौनपुर के सूबे पर काशी के राजा बलवंत सिंह का अधिकार हो गया था। अतएव साहब जामा और आजमगढ़ के इरादत्त खाँ दोनों ही से उनका बिगाड़ होना स्वाभाविक था। एनकेन प्रकारेण कुछ दिनों तक शासन चलाने के बाद इरादत्त खाँ ने अपने जीवन में ही अपने पुत्र जहान खाँ को अपने शासन का नियमित उत्तराधिकारी घोषित कर दिया, जिसका उनके भतीजे आजम खाँ द्वितीय ने घोर विरोध किया। फलस्वरूप आजमगढ़ के राजघराने में कलह की नींव पड़ गयी। शान्ति स्थापित करने के अभिप्राय से इरादत्त खाँ ने जागिरदारी का बंटवारा करने को राजी हो गये, किन्तु आजम खाँ द्वितीय तो अखण्ड राज्य ही चाहते थे। फलतः इरादत्त खाँ के जीवन पर जहान खाँ राज्य के अधिकारी माने जाते रहे। आजम खाँ द्वितीय ने भी अवसर की ताक में रहकर उनका कोई सकिय विरोध नहीं किया, इरादत्त खाँ की मृत्यु के बाद ग्रह कलह ने उग्र रूप धारण किया और शासन की बागडोर ढीली पड़ गयी। उसके परिणामस्वरूप लगातार पांच वर्षों तक खिराज की अदायगी नहीं हो सकी, तब अवध के नवाब ने अपने अधिकारी मुअज्जम खाँ को आजमगढ़ भेजा। उन्होंने निजामाबाद में रहकर शासन का प्रबन्ध करना आरम्भ किया। सहूलियत के अभिप्राय से उन्होंने निजामाबाद में ही जागिरदारी के प्रमुख

कार्यकर्ताओं और जमीदारों का एक सम्मेलन किया, जहां किसी बात पर नवाब के अधिकारी और जहान खाँ के बीच तलवारे खिंच गयी, जिसके परिणामस्वरूप दोनों वहीं लड़–मर गये। उक्त समाचार पाकर अवध के नवाब ने बेनी बहादुर नामक अपने एक मंत्री को आजमगढ़ भेजा, वे आजमगढ़ का इलाका उस समय गाजीपुर के नाजिम फजल अली को सुपुर्द करके लौट आये। फजल अली के शासन में जनता में काफी असंतोष फैल गया, जिसकी खबर नवाब अवध तक पहुंची। नवाब अवध ने पुनः मंत्री बेनी बहादुर को ही जांच के लिए आजमगढ़ भेजा, इस बार उन्होंने शाही खिराज की वसूली करने के लिए खिनतेदार, लंबरदार नियुक्त कर दिये, जिनके द्वारा वसूली व शासन के अन्य कार्य भी होने लगे।

1764 ई0 में अंग्रेजों का बक्सर की लड़ाई में आजम खाँ द्वितीय ने नवाब सुजाउद्दौल की काफी सहायता की, जिसमें नवाब अंग्रेजों से हार गये, उसी समय किसी प्रकार मंत्री आदि को अपने पक्ष में करके आजम खाँ द्वितीय ने अपनी खोई हुई जागीरदारी पुनः प्राप्त कर ली, पर कुछ दिनों के बाद शासन करने के बाद वे शिकार करके लौटते समय आक्रमणकारी द्वारा 1771 ई0 में एकरामपुर ग्राम के निकट धोके से मार डाले गये। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके छोटे भाई जहानयार खाँ राज के उत्तराधिकारी माने गये, किन्तु अवध के नवाब ने उक्त दुर्घटना की जांच व शासन का नए सिरे से ठोस प्रभुत्व करने के अभिप्राय से अपने मंत्री एलिच खाँ को आजमगढ़ भेजा। उन्होंने 1772 ई0 में जागिरदारी समाप्त करके जिले के भू–भाग को अवध के शासन का एक चकला (जिला) बना दिया और उसका सारा प्रबन्ध एक चकलेदार को सुपुर्द कर दिया, जो नवाब अवध के प्रति उत्तरादायी रहकर कार्य करने लगा। नवाब की ओर से आजमगढ़ के राजघराने के लिए केवल कुछ थोड़े से गांव गुजारे के लिए उनके अधिकार में छोड़ दिये गये और राज्य के साथ ही राजा शब्द का भी अपहरण और वर्षों से अपने खानदानी राज्य का यह पतन देखकर जहान खाँ भी कुछ दिनों के बाद लापता हो गये।

Sd/- बी. आर. गौतम

लेखकः डॉ0 बी0आर0 गौतम
महात्मा ज्योतिबा फूले सेवा संस्थान,
मेंहनगर, आजमगढ़।
रजिस्ट्रेशन नं0: AZ8926